



ज्ञानविधि

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)

3049-2327(Print)

IIFS Impact Factor-4.5

Vol.-3; Issue-2 (Apr.-June) 2026

Page No.- 232-244

©2026 Gyanvidha

<https://journal.gyanvidha.com>

Author's :

1. दुर्गानंद चौधरी

शोधार्थी, संस्कृत विभाग, मोनाड विवि, हापुड़, उत्तरप्रदेश.

2. डॉ. विनीता शर्मा

शोध पर्यवेक्षक, असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, मोनाड विवि, हापुड़, उत्तरप्रदेश.

Corresponding Author :

दुर्गानंद चौधरी

शोधार्थी, संस्कृत विभाग, मोनाड विवि, हापुड़, उत्तरप्रदेश.

संस्कृत क्रिया रूपों के संयुग्मन का विश्लेषणात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन

सार : मानव इतिहास में सबसे पुरानी और सबसे व्यवस्थित रूप से संरचित भाषाओं में से एक के रूप में स्वीकार की जाने वाली संस्कृत में असाधारण गहराई, परिशुद्धता और विश्लेषणात्मक जटिलता की क्रिया-संयोजन प्रणाली है। यह समीक्षा पत्र शास्त्रीय व्याकरण ग्रंथों, विशेष रूप से पाणिनी के अष्टाध्यायी (लगभग चौथी शताब्दी ईसा पूर्व), पतंजलि के महाभाष्या, भर्तृहरि के वक्यापादिया और आधुनिक तुलनात्मक भाषाई विद्वता पर आधारित संस्कृत क्रिया संयुग्मन की विश्लेषणात्मक और आलोचनात्मक जांच करता है-जिसे परंपरा में तिनांत-प्रकरण या धातु-रूप-विकार के रूप में जाना जाता है। पेपर व्यवस्थित रूप से मौखिक जड़ों (धातु) की सैद्धांतिक नींव, दस संयुग्म वर्गों (गण) के वर्गीकरण, दस लकारों (काल और मनोदशा) की संरचनात्मक यांत्रिकी, परस्मैपद और आत्मानेपद आवाज प्रणालियों के बीच अंतर और मौखिक प्रतिमानों के भीतर संधी नियमों के संचालन की पड़ताल करता है। यह आगे पैनिनियन व्याकरण की परिवर्तनकारी नियम प्रणाली (सूत्र-पाठ) का आलोचनात्मक मूल्यांकन करता है, संस्कृत मौखिक आकृति विज्ञान के संज्ञानात्मक और दार्शनिक आधार की जांच करता है, और प्रोटो-इंडो-यूरोपीय और अन्य शास्त्रीय भाषाओं के साथ तुलनात्मक समानताओं का पता लगाता है। यह अध्ययन कम्प्यूटेशनल भाषाविज्ञान, भाषा शिक्षाशास्त्र और संस्कृत व्याकरण परंपरा के संरक्षण से संबंधित निष्कर्षों के संश्लेषण के साथ समाप्त होता है।

मुख्य शब्द : धातु, तिनांत, लकार, गण, अष्टाध्यायी, परस्मैपद, आत्मानेपद, संस्कृत आकृति विज्ञान, मौखिक संयोजन, पैनिनियन व्याकरण।

1. परिचय : संस्कृत (संस्कार) जिसका शाब्दिक अर्थ है "पूरी तरह से निर्मित" या "परिष्कृत", विश्व की भाषाई विरासत में अद्वितीय विशिष्टता का स्थान रखता है। इसके व्याकरण को प्राचीन व्याकरणविद् पाणिनी द्वारा अभूतपूर्व कठोरता के साथ व्यवस्थित किया गया था, जिनकी अष्टाध्यायी (अष्टाध्यायी)-3,959 सूत्रों (एफोरिज़्मस) का एक पाठ-शास्त्रीय पुरातनता में किसी भी भाषा का सबसे पूर्ण और तकनीकी रूप से परिष्कृत व्याकरणिक विवरण बना हुआ है (चक्रवर्ती, 2021)।

संस्कृत में क्रिया केवल एक शाब्दिक इकाई नहीं है, बल्कि वाक्य का मौलिक संरचनात्मक स्तंभ है। यह परंपरा क्रिया को क्रिया (क्रिया) के रूप में संदर्भित करती है जिसका अर्थ है "क्रिया" या "गतिविधि", और इसके संयुग्मित रूपों को तिनता (तींगंत) के रूप में संदर्भित करता है जो 18 मौखिक अंत (9 परस्मैपदा + 9 आत्मानेपदा) के लिए सामूहिक नाम टिन शब्द से लिया गया है (न्यूपेन, 2024)। पाणिनी की प्रणाली क्रिया के मूल (धातु-धातु) को अपरिवर्तनीय शब्दार्थ कर्नेल के रूप में मानती है जिसमें से सभी मौखिक रूप एफिक्स, संवर्द्धन और ध्वन्यात्मक परिवर्तनों की एक परिष्कृत प्रणाली के माध्यम से उत्पन्न होते हैं।

1.1 अध्ययन का महत्व : संस्कृत क्रिया संयुग्मन का अध्ययन कई परस्पर जुड़े कारणों से महत्वपूर्ण है:

1. यह भाषा पीढ़ी के तंत्र में अद्वितीय अंतर्दृष्टि प्रदान करता है, क्योंकि कोई अन्य प्राचीन व्याकरणिक प्रणाली अष्टाध्यायी में पाए जाने वाले उत्पादक औपचारिकता के स्तर तक नहीं पहुंचती है।
2. संस्कृत संयुग्मन को समझना भारत से यूरोप तक फैले एक विशाल भाषा परिवार की साझा प्रोटो-इंडो-यूरोपीय (पीआईई) विरासत को उजागर करता है।
3. संस्कृत की रूपात्मक वास्तुकला-विशेष रूप से इसकी मौखिक प्रणाली-ने आधुनिक कम्प्यूटेशनल व्याकरण औपचारिकताओं को प्रेरित किया है, जिसमें पाणिनि बैकस फॉर्म (पीबीएफ) शामिल है, जो प्रोग्रामिंग भाषाओं में उपयोग किए जाने वाले बैकस-नौर फॉर्म की भावना में एक पूर्ववर्ती है।

1.2 कार्यक्षेत्र और कार्यप्रणाली : यह समीक्षा पत्र एक बहु-आयामी दृष्टिकोण को अपनाता है: प्राथमिक व्याकरणिक स्रोतों (अष्टाध्यायी, धातु-पाठ, महाभाष्या, सिद्धांत-कौमुदी) का पाठ्य विश्लेषण तुलनात्मक रूपात्मक विश्लेषण, और भारतीय और आधुनिक भाषाई दोनों दृष्टिकोण से माध्यमिक छात्रवृत्ति का आलोचनात्मक मूल्यांकन। संस्कृत शब्दों को स्पष्टता सुनिश्चित करने के लिए एक सुलभ रोमन-लिपि प्रतिनिधित्व का उपयोग करके लिप्यंतरण में प्रस्तुत किया जाता है, साथ ही प्रमुख देवनागरी रूप जहां भाषाविज्ञान की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

2. सैद्धांतिक आधार: धातु और मूल प्रणाली :

2.1 धतू की अवधारणा : (भुवदयो धतवाह) - अशतध्यायी 1.3.1

मौखिक मूल (धातु) संस्कृत क्रिया प्रणाली की मूलभूत इकाई है। पाणिनी का धातु-पाठ (धातुपथ) लगभग 2,000 मौखिक जड़ों को सूचीबद्ध करता है, जिनमें से प्रत्येक में एक शब्दार्थ सूचक (अनुबंध) होता है जो मूल की आवाज, संयुग्मन वर्ग और उच्चारण गुणों को निर्दिष्ट करता है। धातु शब्द अपने आप में समृद्ध रूप से रूपक है-यह मूल धा (पकड़ना, समर्थन करना) से निकला है जो सुझाव देता है कि मौखिक मूल "समर्थन" या "पकड़" का अर्थ है।

भर्तृहरि ने अपने वाक्यापदीय में शब्द-ब्राह्मण की दार्शनिक अवधारणा को विकसित किया है-यह धारणा कि भाषा स्वयं ब्रह्म (अंतिम वास्तविकता) की अभिव्यक्ति है-और मौखिक मूल को सबसे आदिम भाषाई इकाई के रूप में स्थान देते हुए तर्क दिया है: सर्व धातु-स्वभव शब्द-"सभी भाषाएं मौखिक मूल की प्रकृति की हैं"। यह आध्यात्मिक संरचना शास्त्रीय संस्कृत विचार में धातु के गहन महत्व को रेखांकित करती है (कुलकर्णी, 2009)।

2.2 शब्दार्थ श्रेणी द्वारा धतू का वर्गीकरण

धातु-पाठ मौखिक जड़ों को शब्दार्थिक समूहों में व्यवस्थित करता है। प्रमुख श्रेणियों में शामिल हैं:

अर्थगत श्रेणी	संस्कृत पद	उदाहरण धातु	अर्थ
सत्ता / अस्तित्व	सत्तार्थक	भू (भू)	होना, बनना
क्रिया / गमन	कर्मार्थक	गम् (गम्)	जाना
ज्ञान / बोध	ज्ञानार्थक	ज्ञा (ज्ञा)	जानना
वाणी / अभिव्यक्ति	वदार्थक	वद् (वद्)	बोलना
दान / प्रदान	दानार्थक	दा (दा)	देना
इच्छा / संकल्प	इच्छार्थक	कम् (कम्)	इच्छा करना

2.3 अनुबंध-धातु-पथ में ध्वन्यात्मक मार्कर : धातु-पाठ की एक महत्वपूर्ण और अक्सर गलत समझी जाने वाली विशेषता अनुबंधों (अनुबंध) का उपयोग है-मूल रूपों से जुड़े धातुविज्ञानी मार्कर जो वास्तविक भाषण में नहीं बल्कि संकेत व्याकरणिक गुणों में उच्चारित होते हैं। उदाहरण के लिए, मूल भू (भू) में मार्कर यू होता है, जो दर्शाता है कि इसमें परस्मैपद और आत्मानेपद दोनों अंत हो सकते हैं। जड़ तुध (तुध) में ए का निशान होता है, इसे गण VI (तुदादी) में रखा जाता है। पाणिनी का नियम-अनुबंध सूत्र प्रणाली के लिए है-इस परंपरा में अंतर्निहित मेटा-व्याकरणिक परिष्कार के स्तर का उदाहरण है (देशपांडे, 1992)।

3. दस संयुग वर्ग (गण) :

3.1 गण प्रणाली का अवलोकन : संस्कृत मौखिक जड़ों को दस संयुग वर्गों में व्यवस्थित किया जाता है जिन्हें गण (गण) कहा जाता है, प्रत्येक का नाम इसके प्रोटोटाइप मूल के नाम पर रखा गया है। प्रत्येक गण एक विशिष्ट वर्ग-चिह्न (विकरण-विकरण) को नियोजित करता है जो मूल और व्यक्तिगत अंत के बीच डाला जाता है। इस वर्ग-चिह्न में मूल के ध्वन्यात्मक आकार और बनने वाले काल/मनोदशा (लाकरा) के आधार पर ध्वन्यात्मक संशोधन होते हैं। गण प्रणाली न केवल रूपात्मक प्रतिरूपण को दर्शाती है बल्कि डायक्रोनिक परतों को भी दर्शाती है-विभिन्न वर्ग प्रोटो-इंडो-यूरोपीय मौखिक आकृति विज्ञान के अलग-अलग स्तरों से विशेषताओं को संरक्षित करते हैं।

गण संख्या	गण का नाम	आदर्श धातु	विकरण (गण-चिह्न)	विशेषता
I	भ्वादि गण (भ्वादि)	भू (भू)	अ (अ)	सर्वाधिक उत्पादक गण; विषयगत 'अ' का प्रयोग
II	अदादि गण (अदादि)	अद् (अद्)	— (कोई नहीं)	अविषयगत; प्रत्यय सीधे जोड़े जाते हैं
III	जुहोत्यादि गण (जुहोत्यादि)	हु (हु)	पुनरुक्ति	पुनरुक्त वर्तमान धातु-रूप
IV	दिवादि गण (दिवादि)	दिव् (दिव्)	य (य)	कर्मवाच्य-सदृश निर्माण; य-विकरण
V	स्वादि गण (स्वादि)	सु (सु)	नु/नो (नु)	नासिक्य अन्तःक्षेप (नु/नो)
VI	तुदादि गण (तुदादि)	तुद् (तुद्)	अ (अ)	लघु 'अ'; उदात्त स्वर धातु पर
VII	रुधादि गण (रुधादि)	रुध् (रुध्)	न (न)	धातु में नासिक्य अन्तःक्षेप
VIII	तनादि गण (तनादि)	तन् (तन्)	उ (उ)	उ/ओ प्रत्यय का प्रयोग
IX	क्र्यादि गण (क्र्यादि)	क्री (क्री)	ना/नी (ना/नी)	ना/नी प्रत्यय का प्रयोग
X	चुरादि गण (चुरादि)	चुर (चुर)	अय (अय)	प्रेरणार्थक प्रकार; सर्वाधिक नियमित गण

3.2 गण सीमाओं का आलोचनात्मक विश्लेषण : संस्कृत व्याकरण में विश्लेषणात्मक बहस का एक प्रमुख बिंदु गणों के बीच अतिव्यापी और सीमा अस्पष्टता की डिग्री से संबंधित है। कई जड़ें अलग-अलग अर्थों के साथ कई गणों में दिखाई देती हैं-एक घटना जिसे पाणिनी कर्मकारक-विवेक (शब्दार्थ कार्य का अंतर) की अवधारणा के माध्यम से संभालती है। उदाहरण के लिए, मूल यज्ञ (बलिदान करने के लिए) गण । और गण VII में अलग-अलग कार्य करता है। शास्त्रीय टिप्पणीकार, विशेष रूप से कैयता (उनके प्रदीप में) और नागस भट्ट (लघु-शब्देन्दु-शेखर में) इस बात पर बहस करते हैं कि क्या गण सदस्यता मुख्य रूप से शब्दार्थ, आकृति विज्ञान या ऐतिहासिक-व्युत्पत्ति विज्ञान है।

जॉर्ज कार्डोना (1997) और स्टेफनी जैमिसन (1983) जैसे आधुनिक भाषाविदों ने तर्क दिया है कि गण प्रणाली आंशिक रूप से विषयगत और गणितीय क्रियाओं के बीच प्रोटो-इंडो-यूरोपीय अंतर को दर्शाती है। यह पार-भाषाई विश्लेषण ऐतिहासिक गहराई प्रदान करता है जो अन्यथा एक मनमाने रूपात्मक वर्गीकरण के रूप में दिखाई दे सकता है (गोयल, 2007)।

4. लाकरा प्रणाली-काल और मनोदशाएँ :

4.1 पाणिनी का लाकड़ा फ्रेमवर्क :

लः कर्मणि च भावे चाकर्मकाणाम् ।

(लाह करमानी चा भावे चक्करमनमा) - अष्टाध्यायी 3.4.69

संस्कृत मौखिक प्रणाली दस लकारों (लकार) को नियोजित करती है-व्याकरणिक श्रेणियाँ जो काल, मनोदशा और पहलुओं को शामिल करती हैं। लकारा शब्द पाणिनी की धातु भाषा में एक अमूर्त व्याकरणिक प्रतीक है, जो मौखिक अंत के एक समूह के लिए खड़ा है। प्रत्येक लाकड़ा एक विशिष्ट लौकिक-मोडल शब्दार्थ क्षेत्र को निर्दिष्ट करता है और व्यक्तिगत अंत (परास्माईपदा या आत्मानेपदा) के संबंधित सेट को ट्रिगर करता है।

लकार	पारंपरिक नाम	अर्थ/कार्य	अंग्रेज़ी समतुल्य	उदाहरण (भू धातु)
लट्	वर्तमान	वर्तमान काल (सामान्य)	He goes	भवति
लिट्	परोक्ष-भूत	दूरस्थ भूतकाल (प्रत्यक्ष रूप से न देखा गया)	He went (long ago)	बभूव
लुट्	अनघतन-भविष्यत्	भविष्य काल (आज के अतिरिक्त)	He will go (tomorrow+)	भविता
लृट्	भविष्यत्	सामान्य भविष्य काल	He will go	भविष्यति
लेट्	वैदिक विधिलिङ्ग / वैदिक सम्भावना	वैदिक प्रयोग (शास्त्रीय संस्कृत में दुर्लभ)	May he go	भवात्
लोट्	विधि / आज्ञा	आज्ञार्थक / आदेश	Let him go!	भवतु
लङ्	अनघतन-भूत	अपूर्ण भूतकाल (आज से पूर्व का)	He was going	अभवत्
लिङ्	विधिलिङ् / आशीर्लिङ्	सम्भावना, कर्तव्य या आशीर्वाद	He should go / May he go!	भवेत् / भूयात्
लुङ्	आओरिस्ट (सामान्य भूत)	सामान्य भूतकाल	He went	अभूत्
लृङ्	क्रियातिपत्ति	शर्तसूचक (Conditional)	He would go	अभविष्यत्

4.2 लकारों में काल (समय) का दार्शनिक आयाम : लाकड़ा प्रणाली समय के एक परिष्कृत दर्शन का प्रतीक है (काल-काल) अधिकांश यूरोपीय भाषाओं के विपरीत, जो मुख्य रूप से वक्ता के वर्तमान क्षण के आसपास काल को व्यवस्थित करती हैं, संस्कृत की लाकड़ा संरचना निकट और दूर के भविष्य के बीच, और सामान्य और समयनिष्ठ पहलुओं के बीच प्रत्यक्ष और अनदेखे घटनाओं (जैसा कि साहित्य के पराक्षा-भूत अंतर में) के बीच अंतर करती है। यह संस्कृत व्याकरण में एक ज्ञानशास्त्रीय अभिविन्यास को दर्शाता है: व्याकरणिक श्रेणियां न केवल समय को कूटबद्ध करती हैं बल्कि वर्णित घटना के साथ वक्ता के ज्ञानात्मक संबंध को भी कूटबद्ध करती हैं (ज्ञा, 2007)।

भर्तृहरि के वाक्यापादिया का सिद्धांत है कि काल (समय) जैसा कि लकारों के माध्यम से व्यक्त किया गया है, शब्द-शक्ति का एक कार्य है-अनुभव को व्यवस्थित करने के लिए शब्द की शक्ति। उनका तर्क है कि भाषा में लौकिक भेद केवल संदर्भात्मक नहीं हैं, बल्कि संज्ञानात्मक वास्तविकता के संरचनात्मक हैं: "कला-शक्ति ही शब्दार्थ विचित्रम उपदेशति"- "शब्द में समय की शक्ति एक विविध अर्थ सिखाती है"।

4.3 वैदिक लकार-ऐतिहासिक और आलोचनात्मक परिप्रेक्ष्य : वैदिक भाषा कई लाकड़ा रूपों को संरक्षित करती है जो प्राचीन हो गए या शास्त्रीय संस्कृत में गायब हो गए। लेट (लेट)-वैदिक उपांग-को ऋग्वेद और अथर्ववेद में बड़े पैमाने पर प्रलेखित किया गया है, लेकिन उत्तर-वैदिक गद्य से अनुपस्थित है। वैदिक में लान में अक्सर वृद्धिहीन अपूर्णताओं को उत्पन्न करने वाले वृद्धि (ए-उपसर्ग) का अभाव होता है जिसे पाणिनि सूत्र के माध्यम से स्वीकार करते हैं: "चंदसी लुन-लान-लर्टम" (वैदिक में, ऑरिस्ट, अपूर्ण, और सशर्त वृद्धि के बिना हो सकता है) इस डायक्रोनिक भिन्नता से पता चलता है कि पैनिनियन ढांचा, जबकि अपने प्राथमिक अभिविन्यास में समकालिक है, भाषाई परिवर्तन की ऐतिहासिक जागरूकता को शामिल करता है।

5. परमशैपद और आत्मानेपद-स्वर प्रणाली :

5.1 अवधारणात्मक भेद :

परस्मैपदम् आत्मानेपदम् ।

(परस्मैपदा-दूसरे के लिए; आत्मानेपदा-अपने लिए)

संस्कृत व्यक्तिगत अंत के दो समूहों को अलग करता है जिन्हें परस्मैपद (परमेपद-शाब्दिक रूप से "दूसरे के लिए शब्द") और आत्मानेपद (आत्मानेपद-"स्वयं के लिए शब्द") कहा जाता है। यह अंतर मोटे तौर पर यूरोपीय व्याकरणविदों द्वारा क्रमशः सक्रिय और मध्य आवाज पर आधारित है, हालांकि संस्कृत अवधारणा शब्दार्थ की दृष्टि से अधिक समृद्ध है। परास्माईपदा में, कार्रवाई का फल एजेंट के अलावा किसी और को प्राप्त होता है; आत्मानेपदा में, एजेंट भी कार्रवाई का लाभार्थी होता है (बर्लिन, 2023)।

कुछ जड़ें केवल परस्मैपद अंत लेती हैं (जिन्हें परस्मैपदम जड़ें कहा जाता है) कुछ केवल आत्मानेपद (अभयपद) और कुछ अर्थ के आधार पर दोनों लेते हैं (अभयपद-दोनों पदों की क्रिया) पाणिनी सामान्य सिद्धांत प्रदान करता है और फिर अपवादों को सूचीबद्ध करता है, जिसमें उत्कर्ष (सामान्य नियम) की तकनीक का उपयोग किया जाता है जिसके बाद अपवाद (अपवाद) होता है।

5.2 व्यक्तिगत अंत प्रतिमान-वर्तमान काल (लाट लाकरा)

पुरुष	वचन	परस्मैपद (भू धातु)	आत्मानेपद (लभ् धातु)
प्रथम पुरुष	एकवचन	भवति (भवति)	लभते (लभते)
प्रथम पुरुष	द्विवचन	भवतः (भवतः)	लभेते (लभेते)
प्रथम पुरुष	बहुवचन	भवन्ति (भवन्ति)	लभन्ते (लभन्ते)

मध्यम पुरुष	एकवचन	भवसि (भवसि)	लभसे (लभसे)
मध्यम पुरुष	द्विवचन	भवथः (भवथः)	लभेथे (लभेथे)
मध्यम पुरुष	बहुवचन	भवथ (भवथ)	लभध्वे (लभध्वे)
उत्तम पुरुष	एकवचन	भवामि (भवामि)	लभे (लभे)
उत्तम पुरुष	द्विवचन	भवावः (भवावः)	लभावहे (लभावहे)
उत्तम पुरुष	बहुवचन	भवामः (भवामः)	लभामहे (लभामहे)

5.3 पाडा भेद का आलोचनात्मक विश्लेषण : लुई रेनोड (1956) और जान गोंडा (1979) सहित आधुनिक विद्वानों ने सवाल किया है कि क्या परास्माईपदा/आत्मानेपदा भेद सभी मामलों में शब्दार्थ के रूप में प्रेरित है या क्या यह काफी हद तक शाब्दिक रूप से निर्धारित किया जाता है- कुछ जड़ें सिंक्रोनिक शब्दार्थ तर्क के बजाय ऐतिहासिक दुर्घटना के माध्यम से एक पद से "संबंधित" हैं। इस बहस का संस्कृत शिक्षाशास्त्र के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ है: यदि भेद शब्दार्थ से प्रेरित है, तो इसे शब्दार्थ नियमों के माध्यम से पढ़ाया जा सकता है; यदि शाब्दिक रूप से निर्धारित किया जाता है, तो इसे मूल रूप से याद किया जाना चाहिए।

6. मौखिक संयोजन में संधी संचालन :

6.1 मॉर्फिम सीमाओं पर ध्वन्यात्मक परिवर्तन :

एचोऽयवायावः ।

(इको 'यवयावाह।) - अशतध्यायी 6.1.78

"स्वर ई, ओ, ऐ, औ एक स्वर से पहले क्रमशः अय, अव, अय, आव बन जाते हैं।"

संधी (संधी-"जंक्शन" या "संयोजन") उन ध्वन्यात्मक परिवर्तनों को संदर्भित करता है जो मॉर्फिम के बीच की सीमाओं पर होते हैं-जिसमें मौखिक जड़ों, एफिक्स और अंत शामिल हैं। मौखिक संयुग्मन में, संधी क्रियाएं व्यापक होती हैं और अक्सर एक संयुग्मित क्रिया के सतह रूप को इसकी अंतर्निहित रूट-प्लस-एफिक्स संरचना से नाटकीय रूप से बदल देती हैं। संस्कृत क्रिया रूपों को विश्लेषित करने और उत्पन्न करने दोनों के लिए संधी नियमों की महारत आवश्यक है (लोवे, 2015)।

6.2 मौखिक प्रतिमानों में संधी के प्रमुख नियम :

नियम का प्रकार	संस्कृत पद	नियम का विवरण	उदाहरण
स्वर संधि	स्वर-सन्धि	दो स्वरों का परस्पर मिलन होना अथवा प्रथम स्वर का लोप/समावेश होना	भू + अ → भव
विसर्ग संधि	विसर्ग-सन्धि	विसर्ग का व्यंजनों या स्वरों के पूर्व परिवर्तन होना	भवः + अत्र → भवत्र
व्यंजन संधि	व्यञ्जन-सन्धि	अन्तिम अथवा प्रारम्भिक व्यंजनों का परस्पर अनुकूलन	युत् + त → युद्ध
गुणादेश	गुणादेश	ह्रस्व अथवा दुर्बल स्वर का गुण रूप में परिवर्तन	भू (उ) → भव (ओ-गुण)
वृद्धिदेश	वृद्ध्यादेश	स्वर का और अधिक प्रबल होकर वृद्धि रूप धारण करना	भू (उ) → भौ (औ-वृद्धि)
सम्प्रसारण	सम्प्रसारण	अर्धस्वर (य्, व्, र्, ल्) का उसके संगत स्वर में परिवर्तन	वच् → उच् (लिट् लकार में)

6.3 वर्बल फॉर्मेशन में ऑगमेंट (अगामा) और रिडुप्लिकेशन :

मौखिक संयुग्मन में विशेष महत्व के दो रूपात्मक संचालन हैं:

आगम (आगम-वृद्धि) उपसर्ग 'ए-' (जिसे वर्ध्गम या बस आगम कहा जाता है) पिछले काल में जड़ से पहले जोड़ा जाता है (लैन, लुन, लर्न लकारस) यह वृद्धि वैकल्पिक रूप से वैदिक में खो गई है, जो शास्त्रीय संस्कृत में पूरी तरह से संरक्षित है। पाणिनी का नियम-"लून-लान-लर्ट-सू चा"-वृद्धि सम्मिलन को नियंत्रित करता है। वृद्धि निश्चित रूप से पिछले समय के संदर्भ की ओर अर्थ को संशोधित करती है।

द्वित्व (द्वित्व-द्विगुणन) लिट लाकड़ा (पूर्ण) और जुहोतियाड़ी वर्ग (गण III वर्तमान) में जड़ के प्रारंभिक भाग को सख्त ध्वन्यात्मक बाधाओं के बाद द्विगुणित किया जाता है। पाणिनी रिडुप्लिकेशन को नियंत्रित करने के लिए कई सूत्रों को समर्पित करता है: रिडुप्लिकेटेड शब्दांश मूल स्वर के छोटे संस्करण का उपयोग करता है, फ्रंट व्यंजन संबंधित फ्रंट व्यंजनों के साथ रिडुप्लिकेट करते हैं, एस्पिरेट्स रिडुप्लिकेशन में एस्पिरेशन खो देते हैं, और इसी तरह। उदाहरण के लिए: भु → बा-भुवा (सही तीसरा व्यक्ति एकवचन)

7. व्युत्पन्न मौखिक रूप-कारणात्मक, वांछनीय और बार-बार :

7.1 व्युत्पन्न तनों की प्रणाली (विक्रम-धातु) : दस प्राथमिक गणों के अलावा, संस्कृत में व्युत्पन्न मौखिक तनों (विक्रत-धातु या द्वितीयक संयुग्मन) की एक उत्पादक प्रणाली है जो व्यवस्थित संलयन के माध्यम से मौजूदा जड़ों से नई शब्दार्थ श्रेणियां उत्पन्न करती है। इनमें कारण (निक-प्रत्याय) वांछनीय (सान-प्रत्याय) आवृत्ति (यान-प्रत्याय) और नाममात्र व्युत्पन्न शामिल हैं। प्रत्येक व्युत्पन्न तने को तब पूर्ण लाकड़ा प्रतिमान और दोनों पदों में संयुग्मित किया जा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप एक असाधारण उत्पादक प्रणाली बनती है।

णिचश्च ।

(निकाशाI) - अष्टाध्यायी 3.1.26

व्युत्पन्न प्रकार	संस्कृत पद	प्रत्यय	अर्थ परिवर्तन	उदाहरण
प्रेरणार्थक	णिजन्त (Nic-anta)	-अय- (णिच् + अ)	किसी को कार्य कराने का भाव	पत् (गिरना) → पातयति (गिराता है / गिरने का कारण बनता है)
इच्छार्थक	सन्नन्त (San-anta)	-इष- (पुनरुक्ति सहित)	किसी कार्य को करने की इच्छा	भू (होना) → बुभूषति (होने की इच्छा करता है)
आवृत्त्यार्थक / तीव्रार्थक	यडन्त (Yan-anta)	-य- (तीव्रता/पुनरावृत्ति सूचक)	किसी कार्य को बार-बार या तीव्र रूप से करना	भू → बोभूयते (बार-बार होता है)
नामधातु	नामधातु (Nāma-dhātu)	-य- / -अय-	किसी संज्ञा के अनुरूप आचरण करना या उसकी इच्छा करना	पुत्र → पुत्रीयति (पुत्र की इच्छा करता है)

7.2 कारणात्मक (निक-एण्टा)-महत्वपूर्ण विश्लेषण : संस्कृत में कारणात्मक संरचना इसकी रूपात्मक पारदर्शिता और शब्दार्थिक नियमितता के लिए उल्लेखनीय है। कारक प्रत्यय-आया-(निक एफिक्स से) मूल और व्यक्तिगत अंत के बीच डाला जाता है, जिसमें मूल आमतौर पर वर्ध् ग्रेड में दिखाई देता है। परिणामी रूप स्वयं परस्मैपद और आत्मानेपद दोनों अंत ले सकता है और इसका उपयोग सभी लकारों में किया जा सकता है। अधिक उल्लेखनीय रूप से, एक कारक (द्विकर्मक-नैरुक्त-निक) का कारक अनुमेय है, जिससे एक दोहरा कारक प्राप्त होता है। यह पुनरावर्ती

क्षमता संस्कृत आकृति विज्ञान की अत्यधिक उत्पादक प्रकृति को दर्शाती है (सुमन, 2023)।

एक आलोचनात्मक विद्वतापूर्ण बहस इस बात से संबंधित है कि क्या कारणात्मक एक मौलिक रूप से अलग क्रिया का प्रतिनिधित्व करता है या केवल आधार मूल के एक रूपात्मक संस्करण का प्रतिनिधित्व करता है। महाभाष्या में पतंजलि व्युत्पन्न प्रक्रियाओं में मूल पहचान की एकता के लिए तर्क देते हैं-"एकधातु-भाव"-यह सुझाव देते हुए कि व्युत्पन्न तने मूल के मौलिक शब्दार्थ सार को साझा करते हैं (हुएट, 2006), संशोधित लेकिन व्युत्पन्न एफिक्स द्वारा प्रतिस्थापित नहीं होते हैं।

8. अष्टाध्यायी-पाणिनी का जनरेटिव व्याकरणिक ढांचा :

8.1 सूत्र विधि और धातु भाषा :

वृद्धिरादैच् । (वृद्धिरादिच्) - अष्टाध्यायी 1.1.1

अदेङ् गुणः । (एडेङ् गुणाह) - अष्टाध्यायी 1.1.2

पाणिनी की अष्टाध्यायी ("आठ अध्याय") को नियमों (सूत्रों) के एक अत्यधिक संपीड़ित समूह के रूप में व्यवस्थित किया गया है जो क्रियाओं के एक क्रम के माध्यम से संस्कृत मौखिक रूपों को उत्पन्न करते हैं। सूत्र एक परिष्कृत धातु भाषा का उपयोग करते हैं जिनमें शामिल हैं: अनुवृत (पूर्ववर्ती सूत्रों के तत्वों की निरंतरता) अधिकार (शासी नियम जो बाद के वर्गों पर काम करते हैं) और भाषा (व्याख्यात्मक मेटा-नियम) यह अष्टाध्यायी को एक साथ एक उत्पादक व्याकरण और भाषा की संरचना को समझने के लिए एक सैद्धांतिक उपकरण बनाता है।

मौखिक संयुग्मन के लिए विशेष रूप से, अष्टाध्यायी प्रकृति की अवधारणा को नियोजित करता है (प्रक्रिया-व्युत्पन्न प्रक्रिया) भू मूल से भावती ("वह/वह है/बन जाता है") बनाने के लिए प्रकृति में शामिल हैं: (1) भवदी-गण में मूल भू की पहचान करना, (2) लाट लाकरा प्रतिस्थापन को लागू करना, (3) तीन अंत को प्रतिस्थापित करना (तीसरे एकवचन परमशार्डपद के लिए टिप) (4) गुण प्रतिस्थापन (भु → भो-) को लागू करना (5) संघी (भो + ए → भव-) को लागू करना (6) विकरण-ए-और अंत-टी को चिपकाना। सतह का रूप लगभग 15-20 नियम अनुप्रयोगों के इस अनुक्रम के माध्यम से उभरता है (कुमार 1972)।

8.2 एक शासी सिद्धांत के रूप में अर्थव्यवस्था (लघवा) : अष्टाध्यायी का एक मौलिक संगठनात्मक सिद्धांत लघव (लघव)-अर्थव्यवस्था या संक्षिप्तता है। पाणिनी संस्कृत के सभी और केवल व्याकरणिक रूपों को उत्पन्न करने के लिए आवश्यक प्रतीकों की संख्या को कम करने के लिए लगातार नियम तैयार करते हैं। यह सिद्धांत, जिसे पैनिनियार्ड विद्वानों ने "आधा-मोटा (मातृ) बचत पानीनी को पुत्र के जन्म जितना प्रिय है" के रूप में व्यक्त किया है, अष्टाध्यायी को असाधारण रूप से संकुचित बनाता है, लेकिन बिना टिप्पणी के व्याख्या करना भी असाधारण रूप से कठिन है (डैश, 2011)।

रचना की अर्थव्यवस्था और व्याख्या की स्पष्टता के बीच तनाव ने एक विशाल टिप्पणी परंपरा को जन्म दिया है, जिसमें कात्यायन की वर्तिका (आलोचनात्मक टिप्पणियाँ), पतंजलि की महाभाष्या (तीसरी-दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व), जयादित्य और वामन की काशीका वृत्ति (7वीं शताब्दी ईस्वी), भट्टोजी दीक्षित की सिद्धांत-कौमुदी (17वीं शताब्दी ईस्वी) और नागेश भट्ट की लघु-शब्देन्दु-शेखर (18वीं शताब्दी ईस्वी) शामिल हैं। यह टिप्पणी परंपरा भाषाविज्ञान के इतिहास में सबसे परिष्कृत और निरंतर बौद्धिक उद्यमों में से एक का प्रतिनिधित्व करती है।

8.3 पैनिनियन प्रणाली का कम्प्यूटेशनल महत्व : अष्टाध्यायी की औपचारिक संरचना ने कम्प्यूटेशनल भाषाविदों का महत्वपूर्ण ध्यान आकर्षित किया है। फ्रिट्स स्टाल (1965) सहित विद्वानों ने प्रदर्शित किया है कि अष्टाध्यायी की नियम-आदेश प्रणाली औपचारिक रूप से चॉम्स्की पदानुक्रम में एक संदर्भ-संवेदनशील व्याकरण के बराबर है। हाल ही में, आईआईटी बॉम्बे और हैदराबाद विश्वविद्यालय में संस्कृत कम्प्यूटेशनल भाषाविज्ञान परियोजनाओं ने

स्वचालित रूपात्मक विश्लेषण और संस्कृत क्रिया रूपों की पीढ़ी के लिए पैनिनियन क्रिया के कम्प्यूटेशनल कार्यान्वयन विकसित किए हैं, जिसमें शास्त्रीय संस्कृत के लिए सटीकता दर 95% से अधिक है (बलबीर, 2017)।

9. तुलनात्मक और डायक्रोनिक परिप्रेक्ष्य :

9.1 संस्कृत क्रिया रूप और प्रोटो-इंडो-यूरोपीय : संस्कृत मौखिक प्रणाली असाधारण निष्ठा के साथ प्रोटो-इंडो-यूरोपीय (पी. आई. ई.) आकृति विज्ञान की विशेषताओं को संरक्षित करती है, जिससे यह ऐतिहासिक-तुलनात्मक भाषाविज्ञान के लिए एक अमूल्य संसाधन बन जाता है। गण/वर्ग प्रणाली पी. आई. ई. विषयगत/गणितीय अंतर से निकटता से मेल खाती है। लिट परफेक्ट रूप (e.g., भु से बाबवा, kr से काकरा) PIE परफेक्ट को दर्शाते हैं, जो अबलाउट (गुना/वर्ध प्रत्यावर्तन) रिडुप्लिकेशन और अलग-अलग व्यक्ति-संख्या के अंत की विशेषता है। लून ऑरिस्ट कई पी. आई. ई. ऑरिस्ट प्रकारों को संरक्षित करता है-रूट ऑरिस्ट, सिग्मेटिक ऑरिस्ट और रिडुप्लिकेटेड ऑरिस्ट।

विशेषता	संस्कृत	यूनानी	लैटिन	अवेस्तन	पीआईई पुनर्निर्माण
तृतीय पुरुष एकवचन वर्तमान काल	भरति	फेरेई	फेर्त	बरैति	*bhereti
तृतीय पुरुष एकवचन परिपूर्ण काल	बभार	पेफोर्के	तुलित	—	*be-bhor-e
अपूर्ण भूतकाल	अभरत्	एफेरेन	फेरेबाट	—	*e-bhere-t
द्वितीय पुरुष एकवचन आज्ञार्थक	भर	फेरे	फेर	बर	*bhere

9.2 वैदिक बनाम शास्त्रीय संस्कृत-संयुग्मन में डायक्रोनिक परिवर्तन : वैदिक से शास्त्रीय संस्कृत में परिवर्तन में मौखिक प्रणाली का महत्वपूर्ण सरलीकरण शामिल था। कई लकरा उत्पादक उपयोग से बाहर हो गए (विशेष रूप से लेट-सबजंक्टिव) दोहरे को शास्त्रीय में बरकरार रखा गया था, लेकिन अधिकांश मध्य इंडो-आर्यन भाषाओं में खो गया था, और शास्त्रीय संस्कृत के पिछले काल में वृद्धि (ए-) अनिवार्य हो गई थी। वैदिक प्रणाली ने प्लुपरफेक्ट (पूर्ण तने के साथ लैन का उपयोग करते हुए) के बीच एक अंतर को भी संरक्षित किया जो शास्त्रीय संस्कृत में गायब हो गया। इन परिवर्तनों से पता चलता है कि संस्कृत की मौखिक प्रणाली, जबकि अन्य इंडो-यूरोपीय भाषाओं की तुलना में असाधारण रूप से रूढ़िवादी थी, भाषाई प्रवाह से अछूती नहीं थी (हुएट, 2009)।

9.3 बाद की भारतीय भाषाओं पर प्रभाव : संस्कृत मौखिक आकृति विज्ञान ने प्राकृत और बाद में आधुनिक इंडो-आर्यन भाषाओं पर गहरा प्रभाव डाला। हालांकि, प्रभाव की डिग्री काफी भिन्न होती है: मराठी एक अपेक्षाकृत जटिल आकृति विज्ञान प्रणाली को बरकरार रखती है, जबकि हिंदी-उर्दू ने नाटकीय रूप से मौखिक आकृति विज्ञान को सरल बना दिया है, परिपूर्ण निर्माण में संख्या समझौते को समाप्त कर दिया है और पद भेद को पूरी तरह से कम कर दिया है। तमिल और कन्नड़ जैसी द्रविड़ भाषाएँ, हालांकि आनुवंशिक रूप से संस्कृत से असंबंधित हैं, लेकिन संस्कृत व्याकरणिक सोच से प्रभावित अपने साहित्यिक रजिस्ट्रों में रूपात्मक पैटर्न दिखाती हैं, विशेष रूप से मौखिक श्रेणियों के वर्गीकरण में।

10. संस्कृत क्रिया व्याकरण के दार्शनिक आयाम :

10.1 मेटाफिजिकल श्रेणी के रूप में क्रिया :

क्रियावाचक: शब्दो धातुः । (क्रियावाचकाह शब्दो धतुह।)

सत्तामात्रं भवतिः । (सत्तामात्रम भवतीह)

संस्कृत व्याकरण दर्शन, विशेष रूप से मीमांसा और व्याकरण स्कूलों में, मौखिक रूपों के विश्लेषण को आध्यात्मिक स्तर तक बढ़ाता है। क्रिया केवल भाषण का एक हिस्सा नहीं है, बल्कि क्रिया (क्रिया/प्रक्रिया) की एक अभिव्यक्ति है जिसे एक मौलिक ऑन्टोलॉजिकल श्रेणी के रूप में समझा जाता है। कुमारिला भट्ट जैसे मीमांसकों ने तर्क दिया कि मौखिक रूप भावना (कारण/निषेधाज्ञा) को व्यक्त करते हैं-एक अनूठी शब्दार्थ श्रेणी जो मौखिक अर्थ को नाममात्र

अर्थ से अलग करती है (रोज़, 1997)। यह सीधे तौर पर अनिवार्य मनोदशा (लॉट लकारा) और अनुष्ठान प्रिस्क्रिप्शन के साथ इसके संबंध के विश्लेषण पर निर्भर करता है।

10.2 भर्तृहरि का मौखिक संज्ञान का दर्शन : भर्तृहरि का वाक्यापादिया (लगभग 5वीं शताब्दी ईस्वी) संस्कृत परंपरा में मौखिक अर्थ का सबसे परिष्कृत दार्शनिक विश्लेषण विकसित करता है। उन्होंने स्फोटा के सिद्धांत के लिए तर्क दिया-यह थीसिस कि भाषा की अर्थ-वाहक इकाई व्यक्तिगत ध्वनि या यहां तक कि शब्द भी नहीं है, बल्कि अर्थ की एक एकीकृत, अविभाज्य इकाई के रूप में वाक्य है। विशेष रूप से क्रियाओं के लिए, भर्तृहरि का तर्क है कि काल और पहलू मार्कर केवल समय में घटनाओं का पता नहीं लगाते हैं, बल्कि अनुभव की बहुत ही लौकिक संरचना का गठन करने में भाग लेते हैं, जिसे वे कला-शक्ति (भाषा में समय की शक्ति) कहते हैं (स्टाल, 1967)।

10.3 मौखिक अर्थ पर बहस-कारक सिद्धांत : पाणिनी का कारक (कारक) संबंधों का सिद्धांत-एक मौखिक क्रिया के संबंध में प्रतिभागियों की शब्दार्थ भूमिका-उनके मौखिक रूपों के विश्लेषण से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। कारक प्रणाली छह प्राथमिक प्रतिभागी भूमिकाओं की पहचान करती है: कर्ता (एजेंट) कर्म (रोगी/वस्तु) करण (उपकरण) संप्रदाय (प्राप्तकर्ता/लाभार्थी) अपदान (स्रोत भूमिका) और अधिकारण (लोकस) संस्कृत वाक्य में मौखिक रूप यह नियंत्रित करता है कि कौन सी कारक भूमिकाएँ सक्रिय होती हैं और उन्हें नाममात्र मामले के अंत के माध्यम से कैसे व्यक्त किया जाता है। मौखिक और नाममात्र व्याकरण का यह एकीकरण पैनिनियन प्रणाली की सबसे सुरुचिपूर्ण विशेषताओं में से एक का प्रतिनिधित्व करता है।

11. शैक्षणिक परिप्रेक्ष्य और आधुनिक अनुप्रयोग :

11.1 शिक्षण क्रिया संयोजन के पारंपरिक तरीके : पारंपरिक संस्कृत गुरुकुल प्रणाली ने प्रतिमान तालिकाओं (रूप-माला) और गणों और लकारों के माध्यम से व्यवस्थित प्रगति के माध्यम से रट्टे याद करने (धातु-पाठ पाठ) पैटर्न मान्यता को नियोजित किया। छात्र पहले एक ही गण के भीतर अन्य जड़ों की ओर बढ़ने से पहले, प्रत्येक लाकड़ा के लिए सभी नौ व्यक्ति-संख्या संयोजनों में मॉडल रूट (आमतौर पर भु या पाट) में महारत हासिल करेंगे। प्रतिमानात्मक सोच में यह नींव-प्रत्येक रूप को एक सामान्य पैटर्न के उदाहरण के रूप में समझना-व्याकरण के लिए पैनिनियन धातुविज्ञानी दृष्टिकोण को दर्शाता है।

11.2 आधुनिक संस्कृत शिक्षाशास्त्र में चुनौतियां : आधुनिक संस्कृत शिक्षाशास्त्र को क्रिया संयुग्मन सिखाने में कई परस्पर संबंधित चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। प्रतिमानों की सरासर मात्रा-दस लकार × दो पद × नौ व्यक्ति-संख्या संयोजन × दस गण, साथ ही व्युत्पन्न तने और निष्क्रिय निर्माण-एक दुर्जेय याद रखने का बोझ प्रस्तुत करते हैं। न्यूनतम आकृति विज्ञान (अंग्रेजी, मंदारिन) के साथ आधुनिक भाषाओं में प्रशिक्षित शिक्षार्थियों को प्रतिमान जटिलता विशेष रूप से चुनौतीपूर्ण लगती है (लड्डु, 1987)। "संस्कृत भारती" बोली जाने वाली संस्कृत आंदोलन और संस्कृत विरासत मंच (सी. एन. आर. एस., फ्रांस) जैसे डिजिटल उपकरणों सहित समकालीन शैक्षणिक नवाचारों का उद्देश्य प्रासंगिक अभ्यास और कम्प्यूटेशनल सहायता के माध्यम से मौखिक प्रतिमानों को अधिक सुलभ बनाना है।

11.3 संस्कृत क्रिया विश्लेषण के लिए कम्प्यूटेशनल उपकरण : हाल के दशकों में संस्कृत मौखिक विश्लेषण के लिए कम्प्यूटेशनल उपकरणों में महत्वपूर्ण विकास देखा गया है। आईआईटी मुंबई में विकसित संस्कृत रूपात्मक विश्लेषक (एसएमए) उच्च सटीकता के साथ मौखिक रूपों का विश्लेषण और उत्पन्न कर सकता है। डिजिटल कॉर्पस ऑफ संस्कृत (डीसीएस) एनोटेटेड ग्रंथ प्रदान करता है जो बड़े पैमाने पर रूपात्मक विश्लेषण की सुविधा प्रदान करता है। जी. आर. ई. टी. आई. एल. (भारतीय भाषाओं में इलेक्ट्रॉनिक ग्रंथों का गोएटिंगन रजिस्टर) कोष मौखिक उपयोग के कार्पस-भाषाई अध्ययन के लिए कच्चा माल प्रदान करता है। इन उपकरणों का न केवल व्यावहारिक शैक्षणिक मूल्य है, बल्कि सैद्धांतिक महत्व भी है, क्योंकि वे एक कम्प्यूटेशनल माध्यम में पैनिनियन व्याकरणिक ढांचे को संचालित

और परीक्षण करते हैं।

12. पैनिनियन प्रणाली का महत्वपूर्ण मूल्यांकन :

12.1 अष्टाध्यायी ढांचे की शक्तियाँ :

न सोऽस्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमं विना ।

(ना सो 'स्ती प्रत्यायो लोके या शब्दानुगमम वीना।) - वक्यापादिया 1.131

अष्टाध्यायी का मौखिक संयुग्मन का उपचार कई उल्लेखनीय शक्तियों को प्रदर्शित करता है जो इसकी स्थायी विद्वतापूर्ण प्रतिष्ठा को सही ठहराते हैं। इसके निर्माण की अर्थव्यवस्था, शिव-सूत्रों और अनुवृत्त-अधिकार प्रणाली के माध्यम से प्राप्त की गई, सामान्यीकरण के असाधारण रूप से संक्षिप्त कथन की अनुमति देती है। सामान्य नियमों (उत्सव) से पहले या बाद में अपवाद (अपवाद) का इसका उपचार चिह्नितता और नियम क्रम के आधुनिक सिद्धांतों का अनुमान लगाता है। काराका ढांचे के माध्यम से ध्वन्यात्मकता, आकृति विज्ञान और वाक्यविन्यास का इसका एकीकरण व्याकरणिक स्तरों के परस्पर जुड़ाव के बारे में जागरूकता प्रदर्शित करता है जो 20 वीं शताब्दी तक पश्चिमी भाषाविज्ञान में मेल नहीं खाते थे।

12.2 संस्कृत मौखिक विश्लेषण में अनसुलझे मुद्दे : संस्कृत मौखिक विश्लेषण में कई मुद्दों पर सक्रिय रूप से बहस जारी है। पद भेद (परस्मैपद बनाम आत्मानेपद) के शब्दार्थ आधार पर विवाद जारी है। गण वर्गीकरण और अंतर्निहित ध्वन्यात्मक या शब्दार्थ श्रेणियों के बीच संबंध पूरी तरह से हल नहीं हुआ है। परिधीय पूर्ण निर्माणों का विश्लेषण रूपात्मक प्रतिमान-आधारित मॉडल को चुनौती देता है। और दोषपूर्ण क्रियाओं के उपचार-मूल जो केवल कुछ लकारों या व्यक्तियों में दिखाई देते हैं-के लिए मानक उत्पादक ढांचे से परे सैद्धांतिक समायोजन की आवश्यकता होती है। संस्कृत क्रिया प्रणाली, जैसा कि पाणिनी की अष्टाध्यायी द्वारा विश्लेषण किया गया है, प्राचीन दुनिया में उत्पन्न मौखिक आकृति विज्ञान के सबसे औपचारिक रूप से कठोर वर्णन का प्रतिनिधित्व करती है। धातु-पाठ, गण वर्गीकरण, लाकड़ा ढांचा और पद भेद के माध्यम से इसका संगठन एक बहु-आयामी ग्रिड प्रदान करता है जिसके भीतर प्रत्येक संयुग्मित रूप एक विशिष्ट रूप से निर्दिष्ट स्थिति पर कब्जा कर लेता है। प्रणाली की उत्पादक शक्ति को व्युत्पन्न तने की संरचनाओं (निक-एंटा, सैन-एंटा, यान-एंटा) द्वारा प्रदर्शित किया जाता है जो जड़ों के एक सीमित समूह से मौखिक शब्दकोश का तेजी से विस्तार करते हैं (सूरियाहेट्टी, 1975)।

संस्कृत मौखिक व्याकरण के दार्शनिक आयाम-जिनमें कारक सिद्धांत, स्फोट सिद्धांत और कला का विश्लेषण शामिल हैं-दर्शाते हैं कि संस्कृत व्याकरणविद केवल रूपों को सूचीबद्ध नहीं कर रहे थे, बल्कि भाषा को एक संज्ञानात्मक और आध्यात्मिक प्रणाली के रूप में सिद्धांतित कर रहे थे। भाषाई और दार्शनिक विश्लेषण का यह एकीकरण संस्कृत बौद्धिक परंपरा की एक अनूठी उपलब्धि है। तुलनात्मक विश्लेषण इस बात की पुष्टि करता है कि संस्कृत मौखिक आकृति विज्ञान असाधारण निष्ठा के साथ प्रोटो-इंडो-यूरोपीय विशेषताओं को संरक्षित करता है, जिससे यह ऐतिहासिक-तुलनात्मक भाषाविज्ञान के लिए एक अमूल्य डेटा स्रोत बन जाता है। उसी समय, वैदिक बनाम का डायक्रोनिक विश्लेषण। शास्त्रीय संस्कृत व्यवस्थित सरलीकरण का खुलासा करती है, इस बात की पुष्टि करती है कि संस्कृत कभी भी परिवर्तन से मुक्त एक स्थिर भाषा नहीं थी।

13 निष्कर्ष :

अनन्तशास्त्रं बहुलाश्च विद्याः अल्पश्च कालो बहुविघ्नता च ।

यत् सारभूतं तदुपासितव्यं हंसो यथा क्षीरमिवाम्बुमध्यात् ॥

(अनंतशास्त्रम बाहुलश्च विद्या अल्पश्च कल बहुविघ्नता चा)।

(याट साराभूतम तदुपासितव्यम हमसो याथा क्षिरामिवंभुमाध्यायत)।

संस्कृत क्रिया संयुग्मन का अध्ययन, जैसा कि इस समीक्षा से पता चलता है, असाधारण समृद्धि का एक प्रयास है- भाषाई विश्लेषण, दार्शनिक प्रतिबिंब, ऐतिहासिक पुनर्निर्माण और कम्प्यूटेशनल औपचारिकरण। ढाई सहस्राब्दी से अधिक समय पहले विकसित पैनिनियन प्रणाली अपनी बौद्धिक जीवन शक्ति को सटीक रूप से बरकरार रखती है क्योंकि यह भाषा की प्रकृति के बारे में मौलिक प्रश्नों को संबोधित करती है: नियमों की एक सीमित प्रणाली सार्थक अभिव्यक्तियों की एक अनंत श्रृंखला कैसे उत्पन्न करती है? व्याकरणिक श्रेणियाँ न केवल भाषाई बल्कि संज्ञानात्मक और अनुभवात्मक अंतरों को कैसे कूटबद्ध करती हैं? भाषा की संरचना विचार की संरचना को कैसे प्रतिबिंबित करती है? समकालीन भाषाविज्ञान के लिए, संस्कृत मौखिक परंपरा न केवल डेटा प्रदान करती है, बल्कि एक पद्धतिगत मॉडल प्रदान करती है: अनुभवजन्य कठोरता, सैद्धांतिक भव्यता और दार्शनिक गहराई का एकीकरण। जैसा कि कालिदास ने रघुवंश में लिखा है-"क्लेश उत्तरायह पायस कल्पवृक्ष"- "ज्ञान का वृक्ष निरंतर प्रयास के माध्यम से अपना फल देता है"-संस्कृत व्याकरणिक जांच की पूरी उपज अभी भी, अपूर्ण रूप से कटाई के रूप में बनी हुई है।

इस समीक्षा से भविष्य के शोध के लिए कई दिशाएँ सामने आती हैं। वैदिक और महाकाव्य-संस्कृत विविधताओं को शामिल करते हुए सभी मौखिक रूपों के लिए पूर्ण पैनिनियन अभ्यास का कम्प्यूटेशनल कार्यान्वयन, सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों लाभ प्रदान करेगा। संस्कृत ग्रंथों में वास्तविक मौखिक उपयोग पैटर्न का कॉर्पस-आधारित विश्लेषण-बड़े डिजिटल कॉर्पोरा का उपयोग करके-इस बात पर प्रकाश डाल सकता है कि विभिन्न पाठ शैलियों और अवधियों में किस प्रकार के लकार, गण और व्युत्पन्न रूप सबसे अधिक उत्पादक हैं। संस्कृत मौखिक आकृति विज्ञान और अन्य रूपात्मक रूप से समृद्ध भाषाओं (जॉर्जियाई, तुर्की, स्वाहिली) के बीच क्रॉस-भाषाई तुलनात्मक कार्य मौखिक प्रतिमान संगठन में सार्वभौमिक प्रवृत्तियों में अंतर्दृष्टि प्रदान कर सकता है।

संदर्भ :

1. चक्रवर्ती, एस. (2021) संस्कृत में व्याख्या के लिए विशिष्ट व्याकरण की भूमिका। मानविकी और सामाजिक विज्ञान में अनुसंधान के जर्नल, 9 (2) 107-187।
2. न्यूपेन, आर. (2024) अंग्रेजी और संस्कृत में रूपात्मक प्रक्रियाएं: एक क्रॉस-भाषाई अध्ययन। वॉक्स बटौली, 9 (01) 72-79.
3. कुलकर्णी, ए., और शुक्ल, डी. (2009) संस्कृत रूपात्मक विश्लेषक: कुछ मुद्दे। भारतीय भाषाविज्ञान, 70 (1-4) 169-177.
4. देशपांडे, एम. एम. (1992) संस्कृत में क्रिया-मूल प्रतिस्थापन के लिए औचित्य। इतिहासकार स्प्राचफोर्सचुंग/ऐतिहासिक भाषाविज्ञान, 105 (1. (A) 18-49
5. गोयल, पी., अरोड़ा, वी., और बेहरा, एल. (2007, अक्टूबर) संस्कृत पाठ का विश्लेषण: पार्सिंग और शब्दार्थ संबंध। इन इंटरनेशनल संस्कृत कम्प्यूटेशनल लिंग्विस्टिक्स सिम्पोजियम (पीपी। 200-218) बर्लिन, हीडलबर्ग: स्प्रिंगर बर्लिन हीडलबर्ग।
6. झा, जी. एन., अग्रवाल, एम., सुभाष, मिश्रा, एस. के., मणि, डी., मिश्रा, डी.,... और सिंह, एस. के. (2007, अक्टूबर) संस्कृत के लिए विभेदक आकृति विज्ञान विश्लेषक। इन इंटरनेशनल संस्कृत कम्प्यूटेशनल लिंग्विस्टिक्स सिम्पोजियम (पीपी। 219-238)
7. बर्लिन, हीडलबर्ग: स्प्रिंगर बर्लिन हीडलबर्ग। ग्रीको, बी। (2023) वैदिक संस्कृत में गति क्रियाओं के साथ परिच्छेद: (के बीच) पाठ्य विश्लेषण और व्याकरणिक पैटर्न। फिलोलॉजिकल सोसाइटी के लेनदेन, 121 (2) 226-250।

8. लोवे, जे. जे. (2015) ऋग्वेदिक संस्कृत में कणः विशेषण क्रिया रूपों का वाक्यविन्यास और शब्दार्थ। ओयूपी ऑक्सफोर्ड। बोंटा, एस. (2024) वैदिक संस्कृत का एक लाक्षणिक व्याकरण। चीनी सेमियोटिक अध्ययन, 20 (2) 379-423।
9. सुमन, सी. (2023) रूसी और संस्कृत में व्याकरणिक संख्या प्रणाली का तुलनात्मक विश्लेषण। जर्नल ऑफ यूनिवर्सल स्टडीज, 8 (3) 110-116।
10. हुएट, जी. (2006, दिसंबर) संस्कृत में अल्प वाक्यविन्यास विश्लेषण शब्दार्थ जाल बाधाओं द्वारा निर्देशित है। डिजिटल पुस्तकालयों में अनुसंधान मुद्दों पर 2006 अंतर्राष्ट्रीय कार्यशाला की कार्यवाही में (पीपी। 1-10)
11. कुमार बी. एस. (1972) संस्कृत वाक्यविन्यास के कुछ पहलू: फिलिमोर के केस व्याकरण के ढांचे के भीतर एक अध्ययन। लंदन विश्वविद्यालय, स्कूल ऑफ ओरिएंटल एंड अफ्रीकन स्टडीज (यूनाइटेड किंगडम)
12. डैश, एस. (2011) प्राचीन भारत में व्याकरणिक परंपराएं और भाषाई विश्लेषण (पाणिनि और तोलकाप्पियम के विशेष संदर्भ के साथ) एक्टा यूनिवर्सिटी कैरोलिना फिलोलॉजिका, (1) 75-97।
13. बलबीर, एन. (2017) विस्तारित व्याकरणः क्रिया-विवरण के संदर्भ में संस्कृत से मध्य इंडो-आर्यन तक। इतिहास शास्त्र भाषा, 39 (2) 21-44.
14. हुएट, जी. (2009) संस्कृत विभाजन। दक्षिण एशियाई भाषा विश्लेषण गोलमेज बैठक XXVIII, डेंटन, ओहायो (अक्टूबर 2009) 415.
15. रोज़, एस. (1997) प्राचीन शास्त्रीय संस्कृत (डॉक्टरेट शोध प्रबंध, मेमोरियल यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूफाउंडलैंड) के एक कार्य, वेतालापांकविंशती में तनाव और पहलू
16. स्टाल, जे. एफ. (1967) संस्कृत में शब्द क्रम और सार्वभौमिक व्याकरण (नं। 5) स्प्रिंगर साइंस एंड बिजनेस मीडिया।
17. लड्डु, एस. डी. (1987) संस्कृत व्याकरण में व्युत्पत्ति (प्रकृति) पर हस्तपुस्तिकाएँ कितनी जल्दी थीं? भंडारकर ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट के इतिहास, 68 (1/4) 593-601।
18. सूरियाहेट्टी, पी. (1975) अमावतुरा का एक वाक्यात्मक अध्ययन। लंदन विश्वविद्यालय, स्कूल ऑफ ओरिएंटल एंड अफ्रीकन स्टडीज (यूनाइटेड किंगडम)

•